National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2023; 1(49): 208-211
© 2023 NJHSR
www.sanskritarticle.com

Gurunath Bhat
Research Scholar,
PG Department of Studies in Sanskrit,
Karnatak University, Dharwad

Dr. Padmavati M Singari
Assistant Professor, and Co - Ordinator, PG Department of – Studies in Sanskrit,
Karnataka University, Dharwad

Correspondence:
Gurunath Bhat
Research Scholar,
PG Department of Studies in Sanskrit,
Karnatak University, Dharwad

शंकराचार्य और पर्यावरण चेतना - सतत जीवन के लिए अद्वैत का पुनर्व्याख्यान

Gurunath Bhat, Dr. Padmavati M Singari

अमूर्त –

वर्तमान विश्व जिस पर्यावरणीय संकट का सामना कर रहा है, वह केवल एक तकनीकी या राजनीतिक समस्या नहीं, बल्कि चेतना का संकट है। इसकी जड़ मानव और प्रकृति को पृथक मानने वाले द्वैतवादी दृष्टिकोण में निहित है। यह शोध लेख प्रतिपादित करता है कि आदि शंकराचार्य का अद्वैत वेदान्त दर्शन इस द्वैत भावना का एक शक्तिशाली दार्शनिक समाधान प्रस्तुत कर सकता है। यह लेख ब्रह्म, आत्मा और माया जैसी अद्वैत की प्रमुख अवधारणाओं को पर्यावरण नीतिशास्त्र की दृष्टि से पुनर्व्याख्यायित करके एक नवीन पारिस्थितिक दृष्टिकोण का निर्माण करने का प्रयास करता है। 'जगन्मिथ्या' (जगत् मिथ्या है) के सिद्धांत को केवल निषेध की दृष्टि से न देखकर, जब व्यावहारिक सत्य के स्तर पर समझा जाता है, तो यह जगत् का अवमूल्यन नहीं करता, बल्कि यह स्थापित करता है कि अद्वैत का अज्ञान ('अविद्या') ही शोषण का मूल कारण है। अंततः, यह लेख यह निष्कर्ष निकालता है कि अद्वैत दर्शन सतत जीवन के लिए एक गहन दार्शनिक आधार प्रदान करता है और स्थिरता को केवल बाहरी क्रियाओं के समूह के रूप में देखने के बजाय, एकत्व को अनुभव करने की आध्यात्मिक साधना में परिवर्तित कर देता है।

मुख्य शब्द

अद्वैत वेदान्त, शंकराचार्य, पर्यावरण चेतना, सतत जीवन, माया, ब्रह्म, आत्मा, जगन्मिथ्या, पर्यावरण नीतिशास्त्र, अद्वैत।

1. भूमिका - प्राचीन दर्शन और आधुनिक संकट

समकालीन पर्यावरण संकट चेतना के संकट के रूप में

आज विश्व जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता के क्षरण और व्यापक प्रदूषण जैसी गंभीर पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना कर रहा है। ये समस्याएँ केवल तकनीकी या आर्थिक विफलताओं का परिणाम नहीं हैं; वे मानव चेतना के एक गहरे संकट के लक्षण हैं। इसका मूल मानव-केंद्रित और द्वैतवादी दृष्टिकोण में है। यह दृष्टिकोण मनुष्य को प्रकृति से पृथक और श्रेष्ठ मानता है, और प्रकृति को केवल शोषण और उपभोग के लिए एक संसाधन के रूप में देखता है (M, ಸಮಕಾಲೀನ ಪರಿಸರನಾಶ ಹಾಗೂ ಸಂಸ್ಕೃತ ಸಾಹಿತ್ಯದಲ್ಲಿ ಪರಿಸರದ ಕಾಳಜಿ ಮತ್ತು ಕೊಡುಗೆಯ ವಿಶ್ಲೇಷಣಾತ್ಮಕ ಅಧ್ಯಯನ., 2020)। इस विभाजित मानसिकता ने मनुष्य और पर्यावरण के बीच के सामंजस्य को नष्ट कर दिया है। इसलिए, इस संकट को हल करने के लिए केवल नई प्रौद्योगिकियाँ पर्याप्त नहीं हैं, बल्कि चेतना के स्तर पर एक मौलिक परिवर्तन की आवश्यकता है।

अद्वैत वेदान्त एक संभावित ढांचे के रूप में

इस संदर्भ में, 8वीं शताब्दी के महान दार्शनिक आदि शंकराचार्य द्वारा प्रतिपादित अद्वैत वेदान्त एक आशाजनक दार्शनिक ढाँचा प्रदान करता है। अद्वैत, अर्थात् 'जो दो नहीं है', एक क्रांतिकारी अ-द्वैत (non-dual) दर्शन है जो मनुष्य और प्रकृति के बीच इस काल्पनिक विभाजन पर सीधे प्रश्न उठाता है (M, अद्वैतदर्शने आत्मसाक्षात्कारसामग्र्याम् मनोविमर्शः, 2020)। समस्त अस्तित्व की मौलिक एकता ही इसका प्रमुख सिद्धांत है। यह पर्यावरण नीतिशास्त्र के लिए एक चुनौतीपूर्ण लेकिन आशाजनक आधार प्रदान करता है। रोचक बात यह है कि आधुनिक पारिस्थितिकी विज्ञान द्वारा प्रतिपादित 'प्रणालीगत चिंतन' (systems thinking) और पारिस्थितिक तंत्रों की 'अंतर-संबद्धता' जैसी अवधारणाएँ, शंकराचार्य द्वारा सदियों पहले प्रतिपादित दार्शनिक अद्वैत की प्रतिध्वनि के समान लगती हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि आधुनिक संकट का समाधान केवल नए आविष्कारों में नहीं, बल्कि प्राचीन, समग्र दृष्टिकोण को पुनः खोजने में निहित है।

शोध-प्रबंध का उद्देश्य और संरचना

इस लेख का मुख्य उद्देश्य यह सिद्ध करना है कि शंकराचार्य के अद्वैत दर्शन, विशेष रूप से ब्रह्म, आत्मा और माया की अवधारणाओं की सूक्ष्म पुनर्व्याख्या के माध्यम से, पर्यावरण चेतना और सतत जीवन के लिए एक ठोस दार्शनिक और नैतिक आधार प्रदान किया जा सकता है। यह लेख पहले अद्वैत के मूल सिद्धांतों की व्याख्या करता है, फिर 'माया' सिद्धांत से संबंधित एक प्रमुख आपत्ति का समाधान करता है। इसके बाद, यह अद्वैत के सिद्धांतों से एक पर्यावरण नीतिशास्त्र का निर्माण करता है और उसे सतत जीवन की प्रथाओं पर लागू करता है। अंत में, आत्म-ज्ञान और वैश्विक कल्याण के बीच अविभाज्य संबंध स्थापित करते हुए यह लेख समाप्त होता है।

2. अद्वैत वेदान्त के मूल सिद्धांत: एकत्व का दर्शन

ब्रह्म सत्यं: एकमात्र, सर्वव्यापी सत्य

अद्वैत वेदान्त के अनुसार, केवल 'ब्रह्म' ही परम सत्य है। वह एकमात्र, अनंत और सर्वव्यापी वास्तविकता है। इसे **'सत्-चित्-आनंद'** (अस्तित्व-चेतना-आनंद) के रूप में वर्णित किया गया है। यह ब्रह्म सभी घटनाओं का आधार (substratum) है, और यद्यपि यह जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और लय का कारण है, तथापि यह स्वयं किसी भी परिवर्तन या प्रभाव से अछूता रहता है। शंकराचार्य अपने 'ब्रह्मसूत्र भाष्य' में सूत्र का उल्लेख करते हुए कहते हैं:

जन्माद्यस्य यतः॥ (ब्रह्मसूत्र 1.1.2)

अर्थात्, "जिससे इस जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और लय होते हैं, वही ब्रह्म है" । इस प्रकार, संपूर्ण ब्रह्मांड का मूल और आधार ब्रह्म ही है।

जीवो ब्रह्मैव नापरः: आत्मा और ब्रह्म का अभेद

अद्वैत 'आत्मा' (व्यक्तिगत आत्मा या चेतना) को शरीर-मन के जटिल संघात से भिन्न, एक शुद्ध, साक्षी-चैतन्य के रूप में मानता है। अद्वैत का परम साक्षात्कार यह जानना है कि इस आत्मा और ब्रह्म के बीच कोई भेद नहीं है। उपनिषदों के महावाक्य, जैसे **"तत्त्वमसि"** (वह तुम हो) और **"अहं ब्रह्मास्मि"** (मैं ब्रह्म हूँ), इसी सत्य की घोषणा करते हैं। यह सिद्धांत प्रत्येक जीव की दिव्यता और संपूर्ण अस्तित्व के आंतरिक संबंध को स्थापित करता है।

पंचभूतों से निर्मित जगत्: ब्रह्म की अभिव्यक्ति

अद्वैत की दृष्टि में, पंचमहाभूतों (पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश) से बना यह जगत् ब्रह्म से पृथक कोई जड़ वस्तु नहीं है। बल्कि, यह ब्रह्म की ही प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति है। तैत्तिरीय उपनिषद् में सृष्टि का क्रम स्पष्ट रूप से वर्णित है:

तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायुः। वायोरग्निः। अग्नेरापः। अद्भ्यः पृथिवी॥ (तैत्तिरीय उपनिषद् 2.1.1)

अर्थात्, "उस आत्मा (ब्रह्म) से ही आकाश उत्पन्न हुआ। आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल और जल से पृथ्वी उत्पन्न हुई।" यह प्रकृति को उसके मूल सार में ही पवित्र और दिव्य मानने का आधार प्रदान करता है। अद्वैत में ज्ञान प्राप्ति के लिए निर्धारित तीन चरण—**'श्रवण'** (शास्त्रों को सुनना), **'मनन'** (सुने हुए पर चिंतन करना) और **'निदिध्यासन'** (ध्यान के माध्यम से अनुभव करना) —आधुनिक पर्यावरण चेतना के विकास के चरणों के साथ सीधी समानता रखते हैं। पर्यावरण शिक्षा (समस्याओं के बारे में सुनना) 'श्रवण' के समान है, हमारी भूमिका पर नैतिक चिंतन 'मनन' के समान है, और एकत्व का आंतरिक दृढ़ विश्वास 'निदिध्यासन' का फल है।

3. 'जगन्मिथ्या' वाद की चुनौती: पर्यावरण विमुखता का आरोप

प्रमुख आलोचना का निरूपण

पर्यावरणीय दृष्टिकोण से अद्वैत वेदान्त पर सबसे प्रबल आपत्ति उसके 'जगन्मिथ्या' (जगत् मिथ्या है) सिद्धांत को लेकर है। आलोचकों का तर्क है कि जगत् को असत्य या भ्रामक कहने से प्रकृति का अवमूल्यन होता है। यह तर्क दिया जाता है कि यह मोक्ष की खोज में सांसारिक मामलों के प्रति उदासीनता, उपेक्षा या तिरस्कार की भावना को बढ़ावा देता है। इस आलोचना का सार यह है कि शंकर का दर्शन जगत् को पूरी तरह से नकारता है और 'लोकविमुख' है।

शंकर का 'सत्ता त्रय' (सत्य के तीन स्तर)

इस आपत्ति का समाधान करने के लिए, शंकर की 'सत्ता त्रय' या सत्य के तीन स्तरों की अवधारणा को समझना आवश्यक है:

1.**पारमार्थिक सत्य:** यह परम या निरपेक्ष सत्य है। इस स्तर पर केवल ब्रह्म ही सत्य है।यह शाश्वत और अपरिवर्तनीय वास्तविकता है।

2. व्यावहारिक सत्य: यह लौकिक या अनुभवजन्य सत्य है। हम जिस नाम-रूप वाले जगत् का अनुभव करते हैं, विज्ञान के नियम, और धर्म-अधर्म के नैतिक विधान, सभी इसी स्तर के अंतर्गत आते हैं। आत्म-ज्ञान के उदय तक, यह जगत् सत्य के रूप में ही अनुभव होता है और इसके सभी व्यवहार अर्थपूर्ण होते हैं।

3. प्रातिभासिक सत्य: यह केवल प्रतीति या व्यक्तिगत भ्रम का सत्य है। रस्सी को साँप समझना या स्वप्न में देखी गई वस्तुएँ इसके उदाहरण हैं।

'मिथ्या' शब्द की पुनर्व्याख्या: आश्रित सत्य, अस्तित्वहीन नहीं

इन तीन स्तरों के आधार पर, जब शंकर जगत् को 'मिथ्या' कहते हैं, तो वे इसे 'अस्तित्वहीन' नहीं कह रहे हैं, बल्कि पारमार्थिक दृष्टि से इसकी तात्त्विक स्थिति का वर्णन कर रहे हैं। 'मिथ्या' का अर्थ है कि यह ब्रह्म की तरह स्वतंत्र रूप से सत्य नहीं है, बल्कि अपने अस्तित्व के लिए ब्रह्म पर आश्रित और अनित्य है। सभी नैतिक और लौकिक कर्तव्य (धर्म) पूरी तरह से व्यावहारिक सत्य के दायरे में आते हैं, और इस स्तर पर वे अत्यंत महत्वपूर्ण और आवश्यक हैं। यह दार्शनिक ढाँचा एक साथ जगत् की आंतरिक पवित्रता (ब्रह्म की अभिव्यक्ति होने के कारण) और हमारे व्यावहारिक जगत् में नैतिक कार्रवाई की तत्काल आवश्यकता, दोनों को बनाए रखने की अनुमति देता है।

शोषण का मूल 'अविद्या'

इस प्रकार, पर्यावरण विनाश का वास्तविक कारण जगत् की 'मिथ्या' स्थिति नहीं, बल्कि हमारी धारणा का दोष है। पर्यावरण विनाश का मूल 'अविद्या' में निहित है अर्थात्, जगत् को आत्मा से पृथक और केवल व्यक्तिगत भोग की वस्तु के रूप में देखने का अज्ञान। 'अविद्या' से उत्पन्न यही द्वैत भाव लालच, अत्यधिक उपभोग और पर्यावरणीय हिंसा का वास्तविक कारण है।

4. अद्वैत का पुनर्व्याख्यान: पर्यावरण नीतिशास्त्र का आधार

एकत्व ही सार्वभौमिक करुणा का आधार

ईशावास्योपनिषद् का एक प्रसिद्ध श्लोक इस एकत्व की दृष्टि को दर्शाता है:

यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्येवानुपश्यति। सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते॥ (ईशावास्योपनिषद्, श्लोक 6)

अर्थात्, "जो सभी प्राणियों को स्वयं में ही देखता है, और स्वयं को सभी प्राणियों में देखता है, वह किसी से घृणा नहीं करता।" जब मुझमें स्थित आत्मा ही अन्य सभी प्राणियों—मनुष्य, पशु, पौधे—में स्थित आत्मा के साथ एक है, तो 'मैं' और 'अन्य' का भेद समाप्त हो जाता है। इस दृष्टि से, प्रकृति को हानि पहुँचाना वास्तव में आत्म-हानि के समान है। यह करुणा केवल मानव जाति तक ही सीमित नहीं रहती, बल्कि संपूर्ण ब्रह्मांड को व्याप्त कर लेती है।

'साधन चतुष्टय' पर्यावरणीय सद्गुणों के रूप में

वेदान्त के साधक के लिए आवश्यक चार योग्यताओं ('साधन चतुष्टय संपत्ति') को पर्यावरणीय सद्गुणों के रूप में पुनर्व्याख्यायित किया जा सकता है:

- **शम** (मन की शांति) और **दम** (इंद्रियों का निग्रह) अशांत उपभोक्तावाद और इंद्रिय सुख की उन इच्छाओं पर विजय पाने में मदद करते हैं जो पर्यावरण विनाश का कारण बनती हैं।
- **उपरति** (वैराग्य) भौतिक वस्तुओं और एक अस्थिर जीवन शैली के प्रति मोह से मुक्ति का प्रतीक है।
- **तितिक्षा** (सहिष्णुता) सादगी से जीने और बदलती दुनिया की चुनौतियों का सामना करने के लिए आवश्यक धैर्य प्रदान करती है।

'अहिंसा' का ब्रह्मांडीय आयाम

अद्वैत के ढांचे में, 'अहिंसा' का सिद्धांत केवल प्राणियों को शारीरिक चोट न पहुँचाने तक सीमित नहीं है। बल्कि, उस एकमात्र सत्य की अभिव्यक्ति के रूप में संपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र की अखंडता को नुकसान पहुँचाने वाली कोई भी क्रिया हिंसा बन जाती है। प्रदूषण, वनों की कटाई और संसाधनों का अत्यधिक उपयोग, ये सभी इस व्यापक अहिंसा का उल्लंघन हैं।

प्रकृति 'ईश्वर' के शरीर के रूप में

व्यावहारिक स्तर पर, भक्ति और नैतिक कर्म के लिए, अद्वैत 'ईश्वर' या 'सगुण ब्रह्म' (गुणों से युक्त ब्रह्म) को जगत् के निर्माता और पालक के रूप में स्वीकार करता है। इस दृष्टिकोण में, प्रकृति को उस दिव्य शक्ति के शरीर के रूप में पूजा जा सकता है। ब्रह्मसूत्र भाष्य जैसे ग्रंथों में ब्रह्मांड को परमात्मा के विराट रूप में वर्णित किया गया है:

अग्निर्मूर्धा चक्षुषी चन्द्रसूर्यौ दिशः श्रोत्रे वाग्विवृताश्च वेदाः। वायुः प्राणो हृदयं विश्वमस्य पद्भ्यां पृथिवी ह्येष सर्वभूतान्तरात्मा॥ (मुण्डकोपनिषद् 2.1.4)

अर्थात्, "अग्नि उसका मस्तक है, सूर्य और चंद्रमा उसकी आँखें हैं, दिशाएँ उसके कान हैं, वेद उसकी वाणी हैं, वायु उसका प्राण है, और संपूर्ण विश्व उसका हृदय है। उसके पैरों से पृथ्वी उत्पन्न हुई; वह सभी प्राणियों की अंतरात्मा है।" यह दृष्टिकोण पर्यावरण संरक्षण को एक पवित्र कर्तव्य, एक प्रकार की पूजा में बदल देता है। जब ऐसा देखा जाता है, तो पर्यावरण नीतिशास्त्र बाहर से थोपे गए नियमों की एक प्रणाली नहीं रह जाता, बल्कि यह दार्शनिक साक्षात्कार का एक स्वाभाविक परिणाम बन जाता है।

5. अद्वैत-प्रेरित सतत जीवन: सिद्धांत से व्यवहार तक

दर्शन और आचरण का सेतु

यह खंड ऊपर चर्चा किए गए दार्शनिक सिद्धांतों को आधुनिक सतत जीवन की व्यावहारिक प्रथाओं से स्पष्ट रूप से जोड़ता है। यहाँ

यह तर्क दिया जाता है कि अद्वैत की समझ एक सतत जीवन शैली की स्वाभाविक अभिव्यक्ति है।

सचेत उपभोग एक आध्यात्मिक अनुशासन के रूप में

आधुनिक दुनिया में उपभोग को कम करना, न्यूनतमवाद (minimalism) और कचरे को रोकना जैसी बातों पर बहुत जोर दिया जाता है। इन्हें 'दम' (आत्म-संयम) और 'उपरति' (वैराग्य) के सिद्धांतों के व्यावहारिक अनुप्रयोग के रूप में देखा जा सकता है। यह झूठी जरूरतों और मोह को पैदा करने वाली 'अविद्या' पर विजय पाने का एक सचेत प्रयास है, जो पर्यावरण पर हमारे पदचिह्न को कम करता है।

तीन 'R' अद्वैत के अभ्यास के रूप में

● **कम करें (Reduce):** यह सीधे तौर पर 'दम' और इच्छाओं के नियंत्रण से संबंधित है।

● **पुनः उपयोग करें (Reuse):** यह दुनिया के संसाधनों को फेंकने योग्य वस्तुओं के रूप में नहीं, बल्कि ब्रह्म की अभिव्यक्तियों के रूप में सम्मान देने का प्रतीक है।

● **पुनर्चक्रण करें (Recycle):** यह अस्तित्व की चक्रीय प्रकृति को स्वीकार करते हुए व्यावहारिक दुनिया में जिम्मेदारी से भाग लेने का संकेत देता है।

सतत जीवन ही एक 'साधना'

स्थानीय भोजन चुनने से लेकर पानी और ऊर्जा के संरक्षण तक, सतत जीवन का हर पहलू एक प्रकार की 'साधना' बन जाता है। सचेत रूप से किया गया प्रत्येक सतत विकल्प एकत्व की जागरूकता को मजबूत करने और असीमित उपभोग की इच्छा रखने वाले अहंकार को भंग करने की एक क्रिया बन जाता है।

सारणी 1: अद्वैत सिद्धांत और सतत प्रथाओं के बीच संबंध

अद्वैत सिद्धांत	पारिस्थितिक व्याख्या	सतत जीवन का अभ्यास
ब्रह्म सर्वव्यापी है	प्रकृति दिव्यता की एक पवित्र अभिव्यक्ति है, शोषण के लिए एक अलग संसाधन नहीं।	प्रकृति के प्रति सम्मान, प्राकृतिक आवासों का संरक्षण, जैव विविधता की रक्षा।
आत्मा-ब्रह्म की एकता	प्रकृति के किसी भी हिस्से को नुकसान पहुँचाना आत्म-हानि के बराबर है।	सभी प्राणियों और पारिस्थितिक तंत्रों के प्रति अहिंसा का पालन, पौधे-आधारित आहार अपनाना।
माया/अविद्या	मानव और प्रकृति के बीच अलगाव का भ्रम शोषण की ओर ले जाता है।	उपभोक्तावाद पर काबू पाना, उपयोगिता से परे प्रकृति के अंतर्निहित मूल्य को पहचानना।
दम (आत्म-संयम)	भौतिक संचय के लिए इंद्रिय इच्छाओं पर नियंत्रण।	उपभोग कम करना ('Reduce'), न्यूनतमवाद, एकल-उपयोग उत्पादों से बचना।
सादगी और अपरिग्रह	मितव्ययिता और संतोष की जीवनशैली पारिस्थितिकी पर दबाव कम करती है।	सामग्रियों का पुनः उपयोग करना ('Reuse'), वस्तुओं की मरम्मत करना, चक्रीय अर्थव्यवस्था का समर्थन करना।

उपसंहार: आत्मज्ञान से विश्वकल्याण की ओर

इस लेख ने व्यापक रूप से यह तर्क दिया है कि अद्वैत वेदान्त एक पर्यावरण-विरोधी दर्शन नहीं है, बल्कि यह उस द्वैतवादी और मानव-केंद्रित चेतना के लिए एक शक्तिशाली समाधान प्रदान करता है जो पर्यावरणीय संकट का कारण है। 'जगन्मिथ्या' सिद्धांत को व्यावहारिक सत्य के ढांचे में पुनर्व्याख्यायित करके, इसके ऊपर की प्रमुख आपत्ति को दूर किया जा सकता है, यह दर्शाया गया है।

अंततः, सच्ची और गहरी पर्यावरण चेतना कोई अलग नैतिक क्षेत्र नहीं है, बल्कि यह 'आत्मज्ञान' का एक अनिवार्य परिणाम है। जब कोई व्यक्ति यह जान लेता है कि उसकी आत्मा ही सर्वव्यापी सत्य है, तो दुनिया की देखभाल करना उतना ही स्वाभाविक हो जाता है जितना कि अपने शरीर की देखभाल करना। विभाजन और संघर्ष से भरे इस युग में, शंकराचार्य का अद्वैत का संदेश न केवल व्यक्तिगत मुक्ति (मोक्ष) का मार्ग दिखाता है, बल्कि सामूहिक अस्तित्व और वैश्विक कल्याण (लोक-कल्याण) के लिए एक खाका भी प्रदान करता है। यह हमें प्रकृति को केवल एक 'वस्तु' के रूप में देखने से, जिसे प्रबंधित या संरक्षित किया जाना है, उस ओर ले जाने का आह्वान करता है जहाँ हम यह महसूस करते हैं कि प्रकृति ही हमारा सच्चा 'स्वरूप' है।

References

1. M.S.G.(2020). अद्वैतदर्शने आत्मसाक्षात्कारसामग्र्याम् मनोविमर्शः,. *Jahnavi Sanskrit E-Journal*.
2. M, S. G. (2020). ಸಮಕಾಲೀನ ಪರಿಸರನಾಶ ಹಾಗೂ ಸಂಸ್ಕೃತ ಸಾಹಿತ್ಯದಲ್ಲಿ ಪರಿಸರದ ಕಾಳಜಿ ಮತ್ತು ಕೊಡುಗೆಯ ವಿಶ್ಲೇಷಣಾತ್ಮಕ ಅಧ್ಯಯನ. *ECOLOGY IN SANSKRIT LITERATURE*, 1-3.
3. Rajib Sarmah - Environmental awareness in the Vedic literature, 2015, ISSN:2394-7519
4. शाङ्करभाष्यसमेत (२००७) ईशादिदशोपनिषदः - मोतीलाल् बनारसीदास् – दिल्लि
5. शाङ्करभाष्यसमेत (२०११) श्रीमद्भगद्गीता - मोतीलाल् बनारसीदास् – दिल्लि
6. भट्टाचार्य श्रीपादशर्म (सम्पादकः) (१९४०) ऋग्वेद संहिता - भारतमुद्रणालय - पूणा
7. हरिरघुनाथ भागवत् (१९२५) श्रीशंकराचार्यविरचितग्रंथसंग्रहः (प्रकरणग्रंथः) - आश्टेकर् - पूण